NEERAJ®

भारत में इतिहास लेखन की परंपराएँ

(Traditions of History Writing in India)

B.H.I.E.-144

Chapter Wise Reference Book
Including Many Solved Sample Papers

Based on

C.B.C.S. (Choice Based Credit System) Syllabus of

I.G.N.O.U.

& Various Central, State & Other Open Universities

By: *Harmeet Kaur* & *Prieti Gupta*

NEERAJ PUBLICATIONS
(Publishers of Educational Books)

Mob.: 8510009872, 8510009878 E-mail: info@neerajbooks.com
Website: www.neerajbooks.com

MRP ₹ 280/-

Content

भारत में इतिहास लेखन की परंपराएं
(Traditions of History Writing in India)

Question Paper—June-2024 (Solved) 1
Question Paper—December-2023 (Solved) 1
Question Paper—June-2023 (Solved) 1
Question Paper—December-2022 (Solved) 1
Question Paper Exam Held in July 2022 (Solved) 1

S.No.	Chapterwise Reference Book	Page

अतीत तथा इतिहास (Past and History)

1. इतिहास क्या है? (What is History?) 1

प्रारंभिक भारत में इतिहास लेखन (History Writing in Early India)

2. मिथक, दान-स्तुति, गाथा, आख्यान और महाकाव्य तथा इतिहास-पुराण परम्परा की ओर संक्रमण (Myths, Dana-Stuti, Gatha, Akhyana and the Transition to Epic and Ithihasa-Purana Tradition) 11
3. बौद्ध तथा जैन परंपराएँ (Buddhist and Jain Traditions) 19
4. कथाएँ और चरित (Kathas and Charitas) 27
5. अभिलेख एवं प्रशस्तियाँ (Inscriptions and Prashastis) 35
6. कल्हण (Kalhana) 43

दक्षिण भारत में इतिहास लेखन (History Writing in South India)

7. संगम साहित्यिक परम्परा (Sangam Literary Tradition) 50
8. आमुक्तमाल्यदा तथा रायवाचकमु (Amuktamalyada and Rayavachakamu) 60

इतिहास लेखन की क्षेत्रीय परम्पराएँ (Regional Traditions of History Writings)

9. संतचरित लेखन और भक्ति परम्परा 68
(Hagiographies and Bhakti Traditions)

10. वंशावलियाँ तथा पारिवारिक इतिहास 80
(Genealogies and Family Histories)

11. बखर और बुरँजी (Bakhar and Buranji) 89

इतिहास लेखन की हिंद-फारसी परंपराएँ (Indo-Persian Traditions of History Writing)

12. जियाउद्दीन बरनी (Ziauddin Barani) 98

13. मुहम्मद कासिम फरिश्ता (Muhammad Qasim Firishta) 106

14. अबुल फज़ल (Abul Fazl) 113

दूसरों के नजरिए से भारत (India as Seen by the Others)

15. यूनानी, चीनी, अरबी तथा फारसी वृत्तांत 120
(Greek, Chinese, Arab and Persian Accounts)

16. यूरोपीय यात्रा-वृत्तांत (European Travelogues) 132

औपनिवेशिक भारत में इतिहास लेखन (History Writing in Colonial India)

17. औपनिवेशिक इतिहास लेखन (Colonial History Writing) 144

18. राष्ट्रवादी (Nationalists) 150

स्वतंत्रता-पश्चात् इतिहास लेखन (Post-Independence Historiography)

19. मार्क्सवादी तथा सबाल्टर्न (Marxists and Subalterns) 156

20. इतिहास लेखन में उभरते विषय 162
(Emerging Themes in History Writing)

■■

Sample Preview of the Solved Sample Question Papers

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

QUESTION PAPER

June – 2024

(Solved)

भारत में इतिहास लेखन की परम्पराएँ

(Traditions of History Writing in Inida)

B.H.I.E.-144

समय : 3 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 100*

नोट : *किन्हीं* ***पाँच*** *प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक भाग से कम-से-कम* ***दो*** *प्रश्न करना अनिवार्य है। सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।*

भाग-I

प्रश्न 1. पौमचरियम् के संदर्भ में जैन ऐतिहासिक परम्परा पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-3, पृष्ठ-22, प्रश्न 1

प्रश्न 2. इतिहास लेखन में राजतरंगिणी के महत्त्व का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-6, पृष्ठ-46, प्रश्न 4

प्रश्न 3. इतिहास निर्माण में वंशावलियों के महत्त्व की चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-10, पृष्ठ-82, 'तीर्थवंशावलियाँ, पारिवारिक दस्तावेज', पृष्ठ-86, प्रश्न 11, पृष्ठ-87, प्रश्न 12

प्रश्न 4. निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए–

(क) इतिहास-पुराण परम्परा

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-2, पृष्ठ-14, प्रश्न 2

(ख) धर्मशास्त्र

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-12, पृष्ठ-101, प्रश्न 5

(ग) आमक्त माल्यद

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-8, पृष्ठ-60, 'आमुक्तमाल्यदा'

(घ) तजकिरात

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-9, पृष्ठ-68, 'तजकिरात'

भाग-II

प्रश्न 5. इतिहास लेखन में जिया बरनी के योगदान का विश्लेषण कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-12, पृष्ठ-101, प्रश्न 4

प्रश्न 6. फारसी वर्णनों में भारत की अवधारणा का संक्षिप्त में वर्णन कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-15, पृष्ठ-124, 'फारसी वृत्तांतकारों की नजर में भारत'

प्रश्न 7. रनजीत गुहा के लेखन के विशेष संदर्भ में सबाल्टर्न इतिहास लेखन पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-19, पृष्ठ-159, प्रश्न 3, पृष्ठ-160, प्रश्न 4

प्रश्न 8. निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियां लिखिए–

(क) बाखर

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-11, पृष्ठ-89, 'बखर'

(ख) निकोलो मानुची

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-16, पृष्ठ-135, 'निकोलो मनुची'

(ग) के.पी. जायसवाल

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-18, पृष्ठ-151, 'काशी प्रसाद जायसवाल'

(घ) स्त्रियों का इतिहास लेखन

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-20, पृष्ठ-163, 'स्त्रियों का इतिहास' ■■

QUESTION PAPER

December – 2023

(Solved)

भारत में इतिहास लेखन की परम्पराएँ

(Traditions of History Writing in Inida)

B.H.I.E.-144

समय : 3 घण्टे] *[अधिकतम अंक : 100*

नोट : *किन्हीं **पाँच** प्रश्नों के उत्तर दीजिए। प्रत्येक भाग से कम-से-कम **दो** प्रश्न करना अनिवार्य है। सभी प्रश्नों के अंक समान हैं।*

भाग - I

प्रश्न 1. ऐतिहासिक परम्परा के निर्माण में महाकाव्यों के योगदान की चर्चा कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-2, पृष्ठ-12, 'महाकाव्य'

प्रश्न 2. किस प्रकार इतिहास के पुनर्निर्माण में अभिलेख तथा प्रशस्तियाँ एक महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं?

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-5, पृष्ठ-39, प्रश्न 2, पृष्ठ-40, प्रश्न 3

प्रश्न 3. संगम साहित्य में प्रतिबिम्बित ऐतिहासिक जागरूकता तथा परम्परा की संक्षिप्त में व्याख्या कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-7, पृष्ठ-50, 'संगम साहित्य में ऐतिहासिक चेतना तथा ऐतिहासिक परम्परा'

प्रश्न 4. निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए–

(क) बुद्ध ग्रंथ

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-3, पृष्ठ-20, 'बौद्ध ग्रंथ'

(ख) चरित साहित्य

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-4, पृष्ठ-28, 'चरित साहित्य'

(ग) भक्ति काव्य

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-9, पृष्ठ-71, 'भक्ति काव्य'

(घ) बंगाल के कुलग्रंथ

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-10, पृष्ठ-81, 'बंगाल के कुलग्रंथ'

भाग - II

प्रश्न 5. असम के इतिहास निर्माण में बुरंजी के महत्त्व की व्याख्या कीजिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-11, पृष्ठ-94, प्रश्न 4

प्रश्न 6. इतिहास लेखन में अबुल फजल के योगदान पर एक टिप्पणी लिखिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-14, पृष्ठ-114, 'अबुल फजल के लेखन में पूर्वाग्रह, अबुल फजल के लेखन में इतिहास के प्रति तार्किक और धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण', 'अबुल फजल के लेखन में समय की अवधारणा'

प्रश्न 7. औपनिवेशिक इतिहास लेखन पर एक निबंध लिखिए।

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-17, पृष्ठ-144, 'औपनिवेशिक इतिहास लेखन की प्रमुख अवधारणाएँ'

प्रश्न 8. निम्नलिखित में से किन्हीं दो पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए–

(क) बरनी के इतिहास संबंधी विचार

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-12, पृष्ठ-101, प्रश्न 4

(ख) इब्नबतूता

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-15, पृष्ठ-123, 'इब्न बतूता'

(ग) सर टॉमस रो

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-16, पृष्ठ-133, 'सर टॉमस रो'

(घ) आर.जी. भंडारकर

उत्तर–संदर्भ–देखें–अध्याय-18, पृष्ठ-150, 'रामकृष्ण गोपाल भंडारकर'

■■

Sample Preview of The Chapter

Published by:

NEERAJ PUBLICATIONS

www.neerajbooks.com

भारत में इतिहास लेखन की परंपराएँ
(Traditions of History Writing in India)

अतीत तथा इतिहास
(Past and History)

इतिहास क्या है?
(What is History?)

1

परिचय

यहूदी ईसाई धर्मों में कुछ परंपराओं के प्रमाणीकरण की आवश्यकता ने यूरोप में इतिहास लेखन को प्रोत्साहित किया और इस प्रक्रिया ने इतिहास को केंद्रीय भूमिका प्रदान की। वनस्पति विज्ञान, भौतिक विज्ञान जैसे विषयों के अध्ययन के संदर्भ में भी इतिहास ज्ञान प्राप्त करने का साधन बना। इस प्रकार इतिहास- विहीन सभ्यता को की पहचान ज्ञान से विहीन सभ्यता के रूप में होने लगी। यूनानियों से लेकर आधुनिक यूरोप तक एक निरंतरता का क्रम बना, जिसने यूरोप को पहचान प्रदान की। यूनानियों और मेसोपोटामिया के निवासियों की भी एक ऐतिहासिक परम्परा रही थी। चीनवासियों ने भी दूसरी सदी से ही ऐसी घटनाओं को दर्ज करना प्रारंभ कर दिया था, जो सृष्टि के समय के चक्रीय स्वरूप पर आधारित थीं तथा जिनमें आचारशास्त्रीय तथा कार्य-कारण के प्रश्नों पर विचार किया गया था। तथ्यों और तार्किक अन्वेषण पर आधारित होने के कारण अतीत संबंधी यूनानी रोमन लेखन को ऐतिहासिक समझा गया था। प्राचीन यूरोप के प्रलेखों से वंशावली, कार्य-कारण, कालबद्धता आदि का विवरण प्राप्त होता है। प्रारंभिक भारत की ऐतिहासिक परंपराओं के अध्ययन के लिए विश्व इतिहास लेखन की इस पृष्ठभूमि में औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत दर्ज होने वाले प्रारंभिक भारत के देशज इतिहास लेखन परंपरा पर शोध करना इस इकाई का मूल उद्देश्य है।

अध्याय का विहंगावलोकन

प्रारंभिक भारतीय इतिहास का निर्माण

जब 18वीं शताब्दी में ब्रिटिश उपनिवेशवादियों को संस्कृत परम्परा के अंतर्गत ऐतिहासिक साहित्य की खोज के संदर्भ में विशेष सफलता नहीं मिली, तो उनके द्वारा भारतीय संस्कृति और इसकी हिंदू सभ्यता को इतिहास-विहीन मान लिया गया। यद्यपि विलियम जोंस जैसे कुछ भारतविद् कुछ ग्रंथों में इतिहास के केंद्रीय तत्व की उपस्थिति का समर्थन कर रहे थे, किंतु अधिकांश के अनुसार इन ग्रंथों में अतीत के वास्तविक अभिलेखन का साक्ष्य बहुत ही कम था। कश्मीर के 12वी शताब्दी के इतिहास को दर्शाती एकमात्र अपवाद कल्हण द्वारा रचित 'राजतरंगिणी' थी। प्राच्यविदों का मानना था कि महाकाव्यों, पुराणों तथा विदेशियों के वृत्तांतों में उल्लेखित कहानियों के आधार पर भारत के इतिहास का थोड़ा-बहुत पुनर्निर्माण किया जा सकता है, किंतु समकालीन यूरोप के इतिहास लेखन से तुलना करने पर वे प्राचीन भारत में ऐतिहासिक दस्तावेजों की व्यवस्थागत अनुपस्थिति का उल्लेख करते थे। इतिहास से उनका तात्पर्य इतिहास अध्ययन विषय से था और वे मानते थे कि प्राचीन भारतीयों में इतिहास का यह केंद्रीय बोध अनुपस्थित था। उनके अनुसार पुनर्जागरण (Renaissance) से उत्पन्न अतीत का बोध साक्ष्य, कार्य-कारण तथा कालानुक्रम के साथ ही धारावाहिक विवरण के प्रति स्पष्ट चेतना का प्रदर्शन करता था, जबकि भारतीय रचनाओं में इसका नितांत अभाव था।

इस प्रकार कुछ प्राच्यवादियों के प्रारंभिक अध्ययन हिंदू विधियों तथा धर्मग्रंथों के अध्ययन तक ही सीमित थे। इसी के साथ 19वीं शताब्दी में उपयोगितावादी विचार भारतीय इतिहास की नवीन व्याख्यायों को प्रस्तुत कर रहे थे। उनके अनुसार भारत इतिहास की अनुपस्थिति का संबंध भारतीय समाज की प्रकृति से था। जेम्स मिल की 'द हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया' में भारत के इतिहास को तीन कालों–हिंदू, मुस्लिम सभ्यताओं तथा ब्रिटिश शासन के रूप में विभाजित किया गया। वे प्राच्यवादियों के इस विचार, कि महाकाव्यों तथा अन्य स्रोतों से भारतीय इतिहास का बोध किया जा सकता है, से सहमत नहीं थे। उनके अनुसार भारतीय हिंदू सभ्यता को पिछड़ी, अतार्किक और गतिहीन सभ्यता के रूप में देखा गया। हीगल ने प्राचीन भारत के संदर्भ उल्लेख किया है, ''किसी राष्ट्र का वास्तविक वस्तुनिष्ठ इतिहास तब तक शुरू हुआ नहीं माना जा सकता, जब तक वह लिखित ऐतिहासिक दस्तावेजों को धारण न करता हो या वहाँ लिखित ऐतिहासिक दस्तावेज न पाए जाते हों। ऐसी संस्कृति जिसके पास अब तक इतिहास नहीं है, उसने कोई वास्तविक सांस्कृतिक प्रगति नहीं की है और यह साढ़े तीन हजार वर्षों के तथाकथित भारतीय इतिहास पर भी लागू होता है।''

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

इन सब विचारों के मध्य अभिलेखशास्त्र, मुद्राशास्त्र तथा पुरातत्व के अध्ययन की परिणति भारतीय इतिहास के पुनर्निर्माण के रूप में उभरी। यद्यपि यूरोपीय पद्धति के साथ भारतीय इतिहास लेखन की तुलना होती रही। 1960 के दशक में भारतीय इतिहासकारों ने पहचाना कि प्राचीन काल में इतिहास की खोज करना संभव है। यह भी माना गया कि भारतीय समाज भी परिवर्तनों के दौर से गुजरा था। हालांकि इन परिवर्तनों के प्रकृति एकरूप नहीं थी। डी.डी. कोसांबी तथा अन्य मार्क्सवादी इतिहासकारों ने अपने शोध कार्यों में ऐतिहासिक परिवर्तन के अनुसंधान को सम्मिलित किया और स्पष्ट किया कि यूरोपीय परंपराओं से ही परिचित इतिहासकार इतिहास लेखन की भारतीय रीति को समझ नहीं पाए। वैसे भी एक संस्कृति से दूसरी संस्कृति में अतीत को व्यवस्थित करने का तरीका भिन्न हो सकता है। वी. एस. पाठक की 'एंशिएंट हिस्टॉरियंस ऑफ इंडिया' में चरित साहित्य की एक विशिष्ट शैली का अध्ययन किया गया था। उनके अनुसार पहले के इतिहासकारों ने वंशावली इत्यादि ऐतिहासिक परंपराओं के अस्तित्व का समर्थन करने वाले ग्रंथों पर अधिक ध्यान नहीं दिया। इसके पश्चात यह तथ्य भी उभरा कि अतीत से संबंधित साहित्यिक रुचि वाले सभी ग्रंथों को इतिहास के रूप में चिह्नित नहीं किया जा सकता है। इतिहास लेखन की भारतीय शैलियाँ पश्चिमी परम्परा की शैलियों से बिल्कुल भिन्न थीं। रोमिला थापर का शोध कार्य भी इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि प्राचीन भारतीय समाज ने इतिहास की परिकल्पना इतिहास के संबंध में पश्चिमी विचार से एक भिन्न स्वरूप में की थी। उन्होंने स्पष्ट किया कि उनके अनुसार कोई भी समाज इतिहास विहीन नहीं होता है, प्रत्येक समाज की अतीत के संबंध में अपनी एक परिकल्पना होती है और भारत भी उसका कोई अपवाद नहीं था। प्रत्येक समाज की दस्तावेजों को व्यवस्थित करने का तरीका भिन्न होता है, जो वहाँ की ऐतिहासिक परम्परा द्वारा निर्धारित होता है।

ऐतिहासिक परम्परा क्या है?

जब समाज अपने अतीत के संबंध में किसी प्रकार के ज्ञान या बोध से अवगत होते हैं, तो ऐतिहासिक परम्पराओं का सृजन होता है। इसमें तीन तत्व सम्मिलित हैं–

(क) अतीत की प्रासंगिक या महत्त्वपूर्ण घटनाओं के सन्दर्भ में ऐतिहासिक चेतना।

(ख) इन घटनाओं का कालानुक्रमिक रूप में व्यवस्थापन तथा कार्य-कारण तत्वों की अभिव्यक्ति।

(ग) किसी विशेष समाज की आवश्यकताओं के अनुसार इन घटनाओं का उल्लेख तथा दर्ज किया जाना।

जो घटनाएँ अतीत के संबंध में मान्य विश्वास को दर्शाती हैं, वे अनिवार्य रूप से ऐतिहासिक परम्परा का अंग बनती हैं। ऐतिहासिक परम्परा का विकास कुछ निश्चित संकेतों पर आधारित होता है, जैसे–

(1) कोई समाज समय के किस बिंदु पर ऐतिहासिक परम्परा के सृजन की आवश्यकता का अनुभव करता है?

(2) इस परम्परा के रखवाले/रक्षक तथा परम्परा को दर्ज करने के लिए कौन-सी शैली अपनायी गयी?

(3) ऐतिहासिक परम्परा की संरचना का सामाजिक संदर्भ।

(4) सामाजिक समूहों द्वारा इस परम्परा का स्व-हित में उपयोग।

रोमिला थापर के अनुसार ऐतिहासिक परम्पराएँ इस प्रकार अतीत के उन पहलुओं का संकेत करती हैं, जो मौखिक रूप में या ग्रंथों में दर्ज, पुरातनता या परिकल्पित ऐतिहासिकता की शुचिता को धारण करते हुए एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक सचेत रूप से हस्तांतरित होते हैं। प्राचीन भारतीय समाज के इन ग्रंथों में ऐतिहासिक चेतना की किस तरह परिकल्पना की गई थी, महत्त्वपूर्ण यह अध्ययन करना है कि समाज ने अपने अतीत को कैसे देखा और इसी तरह क्यों देखा। वर्तमान को वैधता प्रदान करने में ऐतिहासिक परम्परा महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इन सभी पहलुओं का बोध हमें उस समय के समाज को समझने में सहायता करता है।

ऐतिहासिक परम्परा की ओर

समाज अपने अतीत का प्रतिरूपण करने में भिन्न तरीके अपना सकता है। भारतीय ऐतिहासिक परम्परा में तीन प्रकार की परम्पराओं को सम्मिलित किया जाता है–पौराणिक परम्परा, श्रमण परम्परा (विशेषकर बौद्ध तथा जैन परम्परा) तथा चारण परम्परा। पौराणिक तथा श्रमण परम्पराएँ विशेष प्रशस्तिपरक लेखन का निर्माण करती हैं, जिनमें अतीत से संबंधित आख्यानों का समावेश है। इन सभी आख्यानों में अतीत के प्रति जिज्ञासा तथा वर्तमान में इसके प्रकार्य को रेखांकित किया गया है। चारणों की परम्परा महाकाव्यों की आरम्भिक रचनाओं की गहराई तक जाती है। चारणों के दावों के अनुसार उन्होंने उच्च प्रतिष्ठित कुलों की उन वंशावलियों को सूत्रबद्ध किया, जिन्होंने दूसरी सहस्राब्दी सी.ई. में ऐतिहासिक स्रोतों का निर्माण किया। एकल आख्यान की उत्पत्ति समुदाय विशेष की इतिहास से जुड़ी आकांक्षाओं के कारण होती है, जिसके कारण किसी विशेष दृष्टिकोण को मान्यता प्राप्त होती है। ऐतिहासिक परिवर्तन के साथ ही उस अतीत के संबंध में वैकल्पिक दृष्टियों का निर्माण होता है, जो बताती हैं कि क्यों कुछ आख्यान दूसरे आख्यानों की अपेक्षा अधिक सटीक थे।

रोमिला थापर के अनुसार प्राचीन भारत में इतिहास एक चक्रीय समय की धारणा से बँधा हुआ था, जो रेखीय समय पर आधारित ईसाई-यहूदी परम्परा से भिन्न है। इतिहास के रूप में अतीत का पुनर्निर्माण हमेशा एक प्रतिरूपण भर होता है और 'निरपेक्ष सत्य' नहीं हो सकता है।

प्रारंभिक भारत में अतीत के प्रति दृष्टिकोण तथा उसका पाठांकन

यह माना गया है कि समाज के विभिन्न समूहों के इतिहास का संस्करण कल्पना से भरा हुआ हो सकता है, किंतु इन कल्पनापूर्ण संस्करणों से भी लेखक तथा उसके समाज के बारे में बहुत कुछ ज्ञात किया जा सकता है। इन ग्रंथों में कल्पनात्मक बातों को सम्मिलित करने के कारणों का अध्ययन होना चाहिए। प्रत्येक समाज के कई अतीत होते हैं तथा इस अतीत को स्मृतिबद्ध करने वाले आख्यान भिन्न प्रकार के हो सकते हैं। इन विविध रूपों के बीच तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा हम किसी आख्यान की प्रकृति के बारे में जान सकते हैं। भारतीय समाज में अतीत के रूपों का विश्लेषण करना अधिक प्रासंगिक हो जाता है।

रोमिला थापर के अनुसार अतीत का नजरिया विशेषकर परिवर्तन तथा संक्रमण के काल में अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाता है, क्योंकि इसी अवसर पर अतीत को नकार दिया जाता है अथवा वह एक आदर्श प्रतिरूप बन जाता है। प्राचीन भारत की ऐतिहासिक परम्पराओं का अध्ययन करने वाले इतिहासकार को निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखना चाहिए–

(1) इतिहास का प्रयोग अधिकांशत: सत्ताधारी वर्ग को वैधता प्रदान करने के लिए किया जाता रहा है, अत:

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

अधिकांश आरम्भिक ऐतिहासिक लेखन शासक वर्गों और अभिजात्यों के वचनों के रूप में व्यक्त किये गए हैं।

(2) उनके अतीत में ऐतिहासिक परिवर्तन के दृष्टिकोण को समुदाय विशेषों की ऐतिहासिक परम्परा में ही व्यक्त किया गया होता है।

(3) इतिहास का अभिप्राय समय के एक निश्चित बिंदु में अतीत को किसी विशेष दृष्टि से देखने से है, जिससे वर्तमान को इसमें विशेष महत्व मिलता है।

(4) अतीत से संबंधित ग्रंथों को समकालीन संदर्भ में समझना चाहिए, क्योंकि अतीत से संबंधित ग्रंथ और उसके पाठकों के बीच संबंध का इससे संकेत मिलता है।

(5) घटनाओं को एक कालानुक्रम के संदर्भ में दर्ज किए बिना इतिहास लेखन नहीं हो सकता।

विभिन्न प्रकार की ऐतिहासिक परम्पराएँ

इतिहास संबंधी विचार का निर्माण करने वाली इतिहास-पुराण परम्पराओं ने नायक प्रधान से दरबारी चरण और कुल आधारित समाजों से राज्य-व्यवस्था की ओर संक्रमण किया, जिसमें प्रथम चरण के कुछ तत्व दूसरे चरण में भी विद्यमान रहे। चारण परम्परा ऐतिहासिक चेतना से युक्त एक भिन्न प्रकार की परम्परा का निर्माण करती है, जबकि बौद्ध तथा जैन परम्पराएँ एक भिन्न प्रकार की ऐतिहासिक परम्परा का प्रतिनिधित्व करती थीं। जैनों तथा बौद्धों के साहित्य परम्पराओं को संरक्षित करने वाली प्रमुख संस्था मठ थी। श्रमण ऐतिहासिक परम्पराओं के भिन्न दृष्टिकोण के पीछे कई कारक, जैसे–परलोक संबंधी सिद्धांत का महत्त्व, विभिन्न भिन्न मतों का उदय, इन धर्मों के संस्थापकों की ऐतिहासिकता तथा संरक्षणदाताओं की सामाजिक पृष्ठभूमि, विभिन्न मत-सम्प्रदायों का पंथों के रूप में संस्थानीकरण, वैचारिक मतभेदों के विवरणों को सुरक्षित रखना आदि कारक उत्तरदायी थे।

इतिहास तथा इसके विभिन्न स्वरूप

अतीत को निर्मित, पुनर्निर्मित और निरूपित करने के सन्दर्भ में विख्यात इतिहासकार रोमिला थापर के तर्कों अपने लेखन के माध्यम से इस विषयवस्तु के संबंध में व्यापक योगदान दिया है। अतीत की परम्पराएँ दो शब्दों से संबंधित हैं–इतिहास तथा पुराण। इतिहास का शाब्दिक अर्थ है 'ऐसा ही हुआ', जबकि पुराण का तात्पर्य पुरातन से है, जिसके अंतर्गत प्राचीनकाल की कहानियाँ तथा घटनाएँ सम्मिलित हैं। प्रमुख ग्रंथों के रूप में ये देवता-विशेष को समर्पित होते थे और उनसे संबंधित मिथकों और अनुष्ठानों की जानकारी देते थे। 'इतिहास' तथा 'पुराण' शब्दों का उल्लेख 'अथर्ववेद' तथा 'शतपथ ब्राह्मण' में मिलता है। वेदों में इतिहास के अंग के रूप में 'गाथा' (गीत) तथा 'नरशंसी' (नायकों की प्रशंसा में रचे गए काव्य) का उल्लेख है। बौद्ध परम्परा में भी इतिहास का संकेत प्राप्त होता है। आदिपुराण के नौवीं शताब्दी के लेखक जिनसेन ने इतिहास को 'वह जो वास्तव में हुआ था' के रूप में परिभाषित किया गया है। इतिहास से संबंधित ग्रंथों की शैलियों में आने वाले परिवर्तन को सामान्यत: लगभग 1000 बी.सी.ई. से लगभग 500 सी.ई. तक और 500 सी.ई. से लगभग 1300 सी.ई. तक के दो भिन्नता दर्शाने वाले कालों में बाँटकर देखा जाता है। वेद, विशेषकर 'ऋग्वेद' तथा ब्राह्मण ग्रंथ भारतीय उपमहाद्वीप में सर्वाधिक प्राचीन हैं तथा इनके कुछ खंडों को इतिहास की संज्ञा दी गई है। पुराणों के भी कुछ अंगों को ऐतिहासिक माना जाता है।

आरम्भिक रचनाओं में आनुष्ठानिक प्रकृति के ग्रंथ हैं, जिनमें ऐतिहासिक चेतना अंतर्बद्ध स्वरूप की है। इन अंतर्बद्ध स्वरूपों में उत्पत्ति संबंधी मिथक, नायकों की प्रशस्ति संबंधी रचनाएँ तथा प्राचीन वंशीय समूहों की वंशावलियाँ सम्मिलित हैं। बाद की समयावधि में इन शैलियों ने मूर्तता ग्रहण कर ली।

बौद्ध परम्परा के अंतर्गत बौद्ध पाली ग्रंथ, महाविहार संघाराम के इतिवृत्त, उत्तरी बौद्ध परम्परा से संबंधित बुद्ध की जीवनियों का अध्ययन करके इनके केंद्रीय ऐतिहासिक स्वरूप को जानने का प्रयास किया गया। कुछ ऐतिहासिक रचनाएँ, जिन्हें नई स्वतंत्र ऐतिहासिक शैलियों के रूप में देखा जाता है, के अंतर्गत राजकीय जीवनियां, अभिलेख और इतिवृत्त इत्यादि सम्मिलित हैं।

अंतर्निहित/अंतर्बद्ध इतिहास (Embedded History)

इतिहास-पुराण परम्परा का आरंभ 'ऋग्वेद' की दानस्तुति ऋचाओं, नरशंसियों और आख्यानों से भी पहले उन ग्रंथों से हुआ, जिनमें यज्ञ के अनुष्ठानों के स्वरूप को भी सम्मिलित किया गया। 'ऋग्वेद में' उल्लेखित ये विभिन्न उदार संरक्षणदाताओं की प्रशंसा में रचे गए मंत्रों (दानस्तुति) और नरशंसी के रूप में थे। ऐसा लगता है कि इन आख्यानों के माध्यम से अतीत में कुछ उदाहरण स्थापित करने का प्रयास किया गया था। बाद में इन वर्णनों को महाकाव्यों–'महाभारत' तथा 'रामायण' में सम्मिलित किया गया। वंशानुचरित के अंतर्गत वंशावली को पीढ़ीगत उत्तराधिकार की क्रमबद्ध सूचियों के रूप में लिखा गया। इस प्रकार यह अतीत के निर्माण का निरूपण करता है।

इतिहास के मूर्त रूप (Externalised Historical Forms)

इतिहास के मूर्त रूप में जीवन-चरित, इतिवृत्त एवं अभिलेख सम्मिलित हैं। सामान्यत: शासकों या सत्ताधारी व्यक्तियों की जीवनियाँ चरित की श्रेणी में आती हैं। इन चरितों को काव्य के रूप में लिखा गया था। बाणभट्ट की 'हर्षचरित' इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण है। श्रीलंका के बौद्ध विहारों के इतिवृत्तों में 'दीपवंश' तथा 'महावंश' सम्मिलित हैं, जो प्रथम सहस्राब्दी सी.ई. के मध्य से हमें भारत के इतिहास तथा श्रीलंका में बौद्ध धर्म के आगमन के बीच एक अंतर्संबंध स्थापित करते हुए बौद्ध धर्म के आरंभिक इतिहास के विषय में बताते हैं। 'अशोकावदान' में हमें मौर्य शासक अशोक की गतिविधियों का ज्ञान प्राप्त होता है। इसके पश्चात अगली श्रेणी में अभिलेख आते हैं। कालक्रम, वंशीय इतिहास और आर्थिक परिवर्तन के विषय में जानकारी देने के अतिरिक्त ये अभिलेख ऐतिहासिक चेतना का प्रत्यक्ष स्वरूप भी प्रस्तुत करते हैं। सातवीं सदी के बाद की समयावधि में ऐसे अभिलेख उपलब्ध हैं, जिन्हें वंशानुगत इतिवृत्तों के रूप में भी पढ़ा जा सकता है। इनमें से अधिकांश राजाओं तथा उनकी उपलब्धियों का प्रशस्तिपूर्ण वर्णन करते हैं। ऐतिहासिक परम्परा के निर्माण में वंशावली महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इस संदर्भ में कल्हण की 'राजतरंगिणी' महत्त्वपूर्ण है।

ऐतिहासिक परम्पराओं के सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक संदर्भ

विभिन्न ऐतिहासिक संदर्भों में घटित होने वाले परिवर्तनों के अनुसार ऐतिहासिक परम्पराएँ आकार ग्रहण करती हैं। ऐतिहासिक संदर्भों के अंतर्गत घटित हुए परिवर्तनों को समझने के लिए इसकी पृष्ठभूमि को जानना आवश्यक है। वंश समाज (clan society) तथा राजव्यवस्था, प्रारंभिक भारत के सामाजिक संगठन के दो रूप हैं, जिनका साक्ष्य प्राप्त हुआ है। प्राचीन समय में वंश समाजों का उदय हुआ, जो बाद में राजतंत्र में रूपांतरित हो गया। वंश का अभिप्राय

www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com

एकल पूर्वज से उत्पन्न पीढ़ीगत सह-संबंधित समूह से है, जो किसी वास्तविक या काल्पनिक वंशावली द्वारा परिभाषित होता है। किसी भी राजवंश के यश के बखान के लिए कल्पनापूर्ण या वास्तविक वंशावलियाँ अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती थीं। वर्तमान तथा अतीत दोनों को पहचान प्रदान करने में भी वंशावलियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती थीं। किसी वृहद् वंश के छोटी-छोटी वंश शाखाओं में टूटने की प्रक्रिया विखंडन कहलाती थी। इस प्रक्रिया के परिणामस्वरूप कुछ वंश नए स्थानों की ओर प्रवास कर जाते थे। यदि कुछ वंश आपस में मिलकर एक बड़ा वंशीय समूह निर्मित करते, तो यह प्रक्रिया मिश्रण कहलाती थी। वंश आधारित समाजों में शुल्क और बलि के रूप में अपने मुखिया को भेंट अर्पित की जाती थी। इस उत्पाद का अधि कांश भाग अनुष्ठानों में उपयोग हो जाता था। अनुष्ठान करने वाले पुजारी मुखिया को वैधता प्रदान करने के बदले मुखिया से भौतिक उपहारों को प्राप्त करते थे। अनुष्ठानों का प्रचलन बढ़ने से अनुष्ठान विशेषज्ञों के वर्ग का उदय हुआ। एक ऐसा भी वर्ग था, जो अतीत की परम्पराओं को कंठस्थ कर, विशेष अवसरों पर उनका बखान करता था। सूत, भाट, चारण आदि इसी वर्ग से संबंधित माने जाते हैं। पुरोहितों द्वारा मुखिया की नायक के रूप में प्रशंसा की जाती थी। इसी संदर्भ में नायक प्रशंसा (नराशंसी) और गाथाओं का उदय हुआ। इनके द्वारा सभा में वंश-विशेष का बखान किया जाता था। वंश-समाजों को गण-संघ/गणराज्य, कुल-वंश, कुलीनतंत्र आदि में विभाजित किया जा सकता है।

प्रथम सहस्राब्दी बी.सी.ई. के मध्य तक मध्य गंगा के मैदानों में राजतंत्र का उदय हो चुका था। उपहार और यज्ञ-अनुष्ठान काफी कम हो गए थे। करों के द्वारा राजा या मुखिया संपत्ति अर्जित करते थे। कृषि और लौह प्रौद्योगिकी के विस्तार ने नगरीकरण की प्रक्रिया को बढ़ावा दिया। समाज में जाति के आधार पर स्तरण होने लगा, जिससे सामाजिक संगठन ने अधिक जटिल स्वरूप धारण कर लिया। इन सबको नियंत्रित करने के लिए केंद्रीय शक्ति की आवश्यकता से राजतंत्र का उदय हुआ। राजतंत्रों और गण- संघों में मतभेद भी उत्पन्न हुए। वंश समाजों से भिन्न राजतंत्र करों के रूप में संसाधन प्राप्त करने लगे। भूमि पर सामूहिक स्वामित्व की प्रथा समाप्त हो गयी। राजा की सत्ता को वैधता प्रदान करने के बदले ब्राह्मणों को भू-अनुदान दिए जाने लगे। शीघ्र ही धार्मिक संस्थानों और प्रशासकों को भी भूमि अनुदान दिए जाने लगे, जिसके परिणामस्वरूप कृषकों और राजाओं के बीच मध्यस्थ वर्ग अस्तित्व में आया। यह वर्ग अपनी अधीनस्थ भूमि पर राजस्व भी वसूलते थे। शक्तिशाली मध्यस्थ स्वयं को संभावित राजाओं के रूप में देखते थे तथा परस्पर सत्ता के लिए संघर्षरत रहते थे। वंश समाजों का अपेक्षाकृत समतापूर्ण समाज अब स्तरीकृत जटिल समाज में परिवर्तित हो चुका था। राजनीतिक सत्ता के लिए प्रतिस्पर्धा पहले की अपेक्षा आम हो गयी थी। मिथकीय उत्पत्ति तथा वंश-संबंध सत्ता को वैधता प्राप्त करने में सहायता कर रहे थे। ऐतिहासिक परम्पराएं उन परिवर्तनों को दर्शाती है, जिनके माध्यम से गुप्तोत्तर काल में राजव्यवस्था का विस्तार हो रहा था। धार्मिक प्रभुत्वशाली विचारधारा ने भी इन प्रक्रियाओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी थी।

विचारधारात्मक चिंतन

जिस रूप में समाज अपने अतीत को प्रस्तुत करना चाहते हैं, उसी रूप में ऐतिहासिक चेतना अभिव्यक्त होती है। इसका आरंभिक स्वरूप अंतर्बद्ध प्रकृति का था जैसा कि 'ऋग्वेद' की नायक प्रशस्तियों से सुस्पष्ट होता है, जिसमें अतीत आनुष्ठानिक ग्रंथों में अंतर्बद्ध है, जबकि बौद्ध तथा जैन इतिहास लेखन में संघ का इतिहास महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शासकों और शक्तिशाली संरक्षणदाताओं के इतिहास से संबंधित होने के कारण ये नयी परंपरा का आरम्भ करते हैं, जिसमें ऐतिहासिक लेखन से संबंधित गुप्तोत्तर काल के ग्रंथ (अभिलेख, चरित-साहित्य तथा इतिवृत्त) सम्मिलित हैं। अतीत का उस काल के साथ अंतर्संबंध, जिसमें ग्रंथों की रचना की गयी, अध्ययन का एक महत्वपूर्ण पहलू है। रोमिला थापर के अनुसार अंतर्बद्ध परम्परा में आख्यानों का प्रेक्षपकों (interpolations) के माध्यम से एक से अधिक बार अद्यतन (update) किया जाता था, किन्तु ऐतिहासिक लेखों के अस्तित्व में आने से उनमें परिवर्तन की आवश्यकता नहीं रह गयी। किसी भी समाज के अतीत संबंधी दृष्टिकोण के कई रूप हो सकते हैं, जो समय के साथ परिवर्तित होते रहते हैं, इसीलिए सामाजिक संस्कृति को समझने के लिए ऐतिहासिक चेतना महत्त्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न

प्रश्न 1. आपके मत में उपनिवेशवादी विद्वानों की भारत में किसी भी प्रकार के ऐतिहासिक बोध के विद्यमान होने के संबंध में क्या प्रतिक्रिया थी? अपने उत्तर के पक्ष में कारण दीजिए।

उत्तर–18वीं शताब्दी में ब्रिटिश उपनिवेशवादियों ने संस्कृत परम्परा के अंतर्गत ऐतिहासिक साहित्य का अन्वेषण प्रारंभ कर दिया, जिसमें उन्हें विशेष सफलता नहीं प्राप्त हुई और उन्होंने भारतीय संस्कृति और इसकी हिंदू सभ्यता को इतिहास-विहीन सभ्यता के रूप में व्यक्त किया। यद्यपि विलियम जोंस जैसे कुछ भारतविद् कुछ ग्रंथों में इतिहास के केंद्रीय तत्वों के उपस्थिति मानते थे, किन्तु अधिकांश ब्रिटिश विद्वानों के अनुसार कल्हण की 'राजतरंगिणी', जो कश्मीर का 12वीं शताब्दी का इतिहास थी, के अतिरिक्त अन्य ग्रंथों में अतीत के वास्तविक अभिलेखन का साक्ष्य बहुत ही कम है। इस प्रकार प्राच्यविद् विचारधारा इस मत का समर्थन करती थी कि ऐतिहासिक रचनाओं का नितांत अभाव होने के कारण प्राचीन भारत में कोई इतिहास नहीं था। वे भारतीय इतिहास को इतिहास अध्ययन विषय के संदर्भ में देखते थे। वे मानते थे कि प्राचीन भारतीयों में इतिहास-बोध अनुपस्थित था, अतः वे ऐतिहासिक चेतना से भी विहीन थे। इन विचारों के संदर्भ में इतिहास और ऐतिहासिक रचनाओं के बीच अंतर करना विशेष महत्त्वपूर्ण है।

प्राच्यवादियों के अनुसार महाकाव्यों, पुराणों तथा विदेशियों के वृत्तांतों में उल्लेखित कहानियों के आधार पर भारत के इतिहास का थोड़ा-बहुत पुनर्निर्माण किया जा सकता है, किन्तु यह उनके ऐतिहासिक लेखन के संदर्भ में पर्याप्त नहीं था। वे प्राचीन भारतीय ऐतिहासिक दस्तावेजों की तुलना समकालीन यूरोपीय इतिहास लेखन से करते हुए प्राचीन भारतीय लेखन में ऐतिहासिक काल की व्यवस्थागत अनुपस्थिति की ओर संकेत करते थे। उनके अनुसार पुनर्जागरण (Renaissance) से उत्पन्न अतीत का बोध साक्ष्य, कार्य-कारण कालानुक्रम के साथ ही धारावाहिक विवरण के प्रति स्पष्ट चेतना का प्रदर्शन करता था, जबकि प्राचीन भारतीय लेखों में इसका अभाव था। कुछ प्राच्यवादियों ने प्रबोधन (Enlightenment) के दर्शन के मानववादी संस्करण को आधार मानकर हिंदू पद्धति तथा धर्मग्रंथों के अध्ययन द्वारा भारतीय इतिहास की खोज करना प्रारंभ किया, जबकि 19वीं शताब्दी में उपयोगितावादी विचारक भारतीय इतिहास की नवीन व्याख्याएँ प्रस्तुत कर रहे थे। उनके अनुसार भारतीय इतिहास की अनुपस्थिति का

NEERAJ PUBLICATIONS www.neerajbooks.com

www.neerajbooks.com